13

ईमानदारी से रहना

(6:1-18)

यीशु ने अपने चेलों के पास घोषणा की थी, ''यदि तुम्हारी धार्मिकता शास्त्रियों और फरीसियों की धार्मिकता से बढ़कर न हो, तो तुम स्वर्ग के राज्य में कभी प्रवेश करने न पाओगे'' (5:20)। उसके निर्धारित शब्द उस सब का सार थे, जो पहाड़ी उपदेश में आने वाला था।

उपदेश के पहले भाग मत्ती 5:21-48 में यीशु ने अपनी शिक्षा पहले कही गई अपनी बातों और यहूदियों की परम्पराओं के पांच अन्तरों के साथ बनाई। उपदेश की अपनी बातों के दूसरे भाग 6:1-18 में उसने धार्मिक रूपों और मन अर्थात बाहरी रीतियों के विपरीत वास्तविक धर्म की बात की।

सामान्य चेतावनी देने के बाद (6:1), यीशु ने चन्दा देना (6:2-4), प्रार्थना करना (6:5-15) और उपवास रखना (6:16-18) के तीन प्रमुख उदाहरण दिए। क्रेग एस. कीनर ने लिखा है कि यहूदी गुरुओं के लिए अपने निर्देशों में तीन उदाहरणों के समूह का इस्तेमाल करना सामान्य बात है।[1]

सामान्य चेतावनी (6:1)

[1]**''सावधान रहो! तुम मनुष्यों को दिखाने के लिए अपने धर्म के काम न करो, नहीं तो अपने स्वर्गीय पिता से कुछ भी फल न पाओगे।''**

आयत 1. देने, प्रार्थना करने और उपवास रखने के विषयों के अपने ढंग पर यीशु ने एक अर्थ में कहा, ''जो कुछ मैं कहने वाला हूं, उस पर ध्यान दें।'' **सावधान रहो** का यूनानी शब्द (*prosechō*) ''पकड़ो,'' ''ध्यान दो'' और ''खबरदार'' का सुझाव देता है। यीशु अपने चेलों को **धर्म** के अपने कामों के प्रति शास्त्रियों और फरीसियों जैसा व्यवहार अपनाने के विरुद्ध चेतावनी दे रहा था। ''धर्म'' (*dikaiosunē*) शब्द 5:20 से दोहराया गया है। टैक्सट्स रिसेप्टस के आधार पर KJV में आयत 1 के ''धर्म'' की जगह ''दान'' है। परन्तु ''धर्म'' शब्द श्रेष्ठ है और 6:1 वास्तव में दान पर की गई 6:2-4 की चर्चा के संक्षिप्त परिचय के बजाय 6:2-18 का सामान्य परिचय है।

असली धर्म निष्कपट मन से अलग होने वाली धार्मिक गतिविधियां करने के खोखले, बाहरी दिखावे से बचता है। कर्मों का दिखावा **मनुष्यों को दिखाने के लिए** नहीं किया जाना चाहिए। इसके विपरीत उन्हें परमेश्वर को आदर और महिमा देने के लिए समर्पित मनों द्वारा किया जाना चाहिए। यदि ''धर्म'' के काम परमेश्वर और साथी मनुष्य के लिए प्रेम के कारण नहीं किए जाते, तो वे बेकार और किसी काम के नहीं हैं (1 कुरिन्थियों 13:1-3)। गलत प्रेरणा से धार्मिक काम

करने वाले लोगों को **पिता** की ओर से **कुछ भी फल न** मिलेगा। ''फल'' (*misthos*) शब्द हमारे दान देने (6:2), प्रार्थना (6:5), और उपवास रखने (6:16) के लिए परमेश्वर के जवाब के सम्बन्ध में संकेत के रूप में, प्रत्येक विषय के आरम्भ में दोहराया गया है।

दान (6:2-4)

[2]''इसलिए जब तू दान करे, तो अपने आगे तुरही न बजवा, जैसा कपटी, सभाओं और गलियों में करते हैं, ताकि लोग उनकी बड़ाई करें। मैं तुम से सच कहता हूं कि वे अपना प्रतिफल पा चुके। [3]परन्तु जब तू दान करे, तो जो तेरा दाहिना हाथ करता है, उसे तेरा बायां हाथ न जानने पाए; [4]ताकि तेरा दान गुप्त रहे; और तब तेरा पिता जो गुप्त में देखता है, तुझे प्रतिफल देगा।''

आयत 2. यूनानी शब्द *hotan* धर्म के कामों की बात करने वाले प्रत्येक भाग के आरम्भ के प्रतीक का काम करता है जिसका अनुवाद **जब** या ''जब कभी'' हुआ है (6:2, 5, 16)। यीशु यह मानकर चला कि उसके सुनने वाले पहले ही दान करने, प्रार्थना करने और उपवास करने के धर्म के कामों में लगे हुए हैं। यहूदी लोगों से ऐसी गतिविधियों की उम्मीद की जाती थी।

अनुवादित शब्द **तू दान करे** (*eleēmosunē*) का अर्थ आम तौर पर दया या करुणा के किसी भी कार्य को करने के लिए हो सकता है। इसमें केवल सहानुभूति भरी भावनाएं ही नहीं बल्कि मुसीबत में पड़े लोगों को राहत देने के लिए ईमानदारी से किए गए काम भी हैं। याकूब के अनुसार किसी ज़रूरतमंद के प्रति केवल अच्छी भावनाएं रखना ही काफ़ी नहीं है। मसीही व्यक्ति प्रेम के अपने कार्यों से समस्याओं को कम करना चाहता है (याकूब 2:14-16)।

इस संदर्भ में *eleēmosunē* शब्द अधिक स्पष्ट रूप में यहूदी लोगों के निर्धनों को ''दान'' देने के बारे में है (KJV; NRSV)। KJV और NRSV ने नये नियम में इस शब्द को और जगह पर ''दान'' अनुवाद किया गया है (लूका 11:41; 12:33; प्रेरितों 3:2; 9:36; 10:2; 24:17)। माइकल जे. विलकिन्स की टिप्पणी है, ''प्राचीन कृषक समाजों में निर्धनता दूर-दूर तक व्याप्त थी, और इस्राएली लोग निर्धनों के लिए उपाय करने की जिम्मेदारी को बड़ी गम्भीरता से लेते थे (तुलना व्यवस्थाविवरण 15:11)।''[2]

प्रभु **मनुष्यों को दिखाने** के उद्देश्य से निर्धनों को देने को गलत कह रहा था। रब्बियों ने यहूदी लोगों में परोपकार को इतना बिगाड़ दिया था कि अधिकतर वे यही मानने लगे थे कि वह अपने उद्धार को खरीद सकते हैं। अप्रामाणिक पुस्तकों में से एक टोबीत की पुस्तक में कहा गया है, ''भिक्षा दान मृत्यु से बचाता है और हर प्रकार का पाप हरता है।''[3]

यीशु ने अपने चेलों को दान देने में कपटी होने के प्रति चौकस रहने को कहा। उसने यह भी कहा कि उन लोगों को **सभाओं और गलियों में** अपने आगे **तुरही बजवाना** अच्छा लगता था। क्या हम इस टिप्पणी का अर्थ यही निकालें कि धनवान फरीसी वास्तव में दान देने पर तुरही बजवाते थे, ताकि लोग उन्हें देखें और उनका आदर करें? कुछ लोग ऐसा मानते हैं। परन्तु अन्यों का सुझाव है कि तुरहियां मन्दिर में दान इकट्ठा किए जाने के समय बजाई जाती थीं। दान इकट्ठा करने के लिए Shofar सोफ़ार (की तेरह तिजोरियां शोपर, जिसका अर्थ इब्रानी भाषा में ''सींग''

है) का आकार ही तुरहियों (मेढ़ों के सींग) जैसा था।[4] दिए गए धन को चुराने के लिए चोरों का हाथ पहुंचने से रोकने के लिए उनकी लम्बी, सुराहीनुमा गर्दनें होती थीं। सिक्के इन बर्तनों में डलने पर उनके शोर से लोगों का ध्यान खिंचता था। उन सिक्कों की आवाज़ से भी कुछ सीमा तक डाले गए धन की राशि का संकेत मिलता था (देखें लूका 21:1, 2)।

बाइबल में हमें कोई अतिरिक्त प्रमाण नहीं मिलता कि किसी ने भी दान देते समय *व्यक्तिगत रूप से* तुरही बजवाई हो। हमारे प्रभु द्वारा दिखाई गई तस्वीर शायद दान देने के समय लोगों का ध्यान अपनी ओर खींचने को दिखाने का प्रतीकात्मक ढंग भी था। जैसा कि जैक पी. लुईस ने निष्कर्ष निकाला है, यह '' 'तुम्हारे अपने ही सींग का भोंपू बजाने' जैसी अलंकारिक अभिव्यक्ति'' है।[5] उसका मानना था कि यह अभिव्यक्ति ''इस तथ्य से ली गई जो वर्षा के लिए पतझड़ के आम उपवासों के समय मेढ़ों के सींग बजाए जाते और दान दिए जाते थे।''[6]

यीशु ने उन लोगों की बात की जो परोपकार का काम **कपटियों** की तरह दूसरों को प्रभावित करने के लिए करते थे। इसका अंग्रेज़ी शब्द ''hypocrites'' यूनानी भाषा के शब्द *hupokritēs* का लिप्यन्तरण है, जिसे इसके मूल अर्थ में ''नाटक के कलाकार'' के लिए इस्तेमाल किया जाता था। यीशु रंगमंच से परिचित था। निश्चय ही वह नासरत से कुछ ही मील दूर स्थिति एक अन्यजाति नगर सिफोरिस से परिचित था। परन्तु इस समय से पहले *hupokrites* शब्द का इस्तेमाल यहूदी लोगों के बीच आडम्बर करने वालों के लिए पहले ही किया जा रहा था।[7] ''[ये लोग] मुखौटे के धर्म के बाहरी काम कर रहे थे, जबकि अपने आप में, उनका अपना मन भ्रष्ट था। उनकी कपटता का, विशेषकर यहां अर्थ *गलत कारणों* के लिए *सही काम* करना है।''[8] मत्ती में ''कपट'' शब्द अन्य कई स्थानों के साथ-साथ (7:5; 15:7; 22:18; 23:13, 15, 23, 25, 27, 29; 24:51) धर्म (6:2, 5, 16) से सम्बन्धित प्रत्येक भाग के आरम्भ में मिलता है।

यीशु ने कहा कि यदि लोग केवल पहचान बनाने के लिए दान करते हैं तो **वे अपना प्रतिफल पा चुके**। ''वे ... पा चुके'' का अनुवाद यूनानी शब्द *apechō* से किया गया है। यह प्राचीन जगत में लेखाकारों द्वारा रसीद के नीचे इस्तेमाल होने वाला शब्द था, जिसका अर्थ था ''पूरी राशि चुका दी गई'' (देखें फिलिप्पियों 4:18; NRSV)।[9] यीशु ने कहा कि कपटियों को मिली मनुष्यों द्वारा पहचान ही उनका एकमात्र प्रतिफल होगा। उन्हें स्वर्ग में पिता से कुछ पाने की उम्मीद नहीं रखनी चाहिए।

आयत 3. इस बात पर और ज़ोर देने के लिए, यीशु ने कहा ''**परन्तु जब तू दान करे, जो तेरा दाहिना हाथ करता है तेरा बायां हाथ न जानने पाए**।'' इस ताड़ना को आम तौर पर यह कहने के लिए लोकोक्ति के ढंग के रूप में समझा जाता है कि जहां तक हो सके दान सावधानी से ही दिया जाना चाहिए। सावधानी पर ज़ोर देने के बावजूद रॉबर्ट एच. गुंड्री ने एक अलग दृष्टिकोण दिया: ''सम्भवतया इस अभिव्यक्ति को अक्षरश: दान प्राप्तकर्त्ता के पास केवल दायें हाथ से विनम्रतापूर्वक चला जाना चाहिए, न कि आस पास के दूसरे लोगों का ध्यान खींचने के लिए दोनों हाथों से समझा जाना चाहिए।''[10]

आयत 4. ईमानदारी से भलाई करने के लिए और परमेश्वर को प्रसन्न करने के लिए देने वाला व्यक्ति **गुप्त में** ही देगा और परमेश्वर उसे इसके लिए आशीष देगा। ''गुप्त में'' का अर्थ

कपटियों के विपरीत ध्यान आकर्षित करने की कोशिश किए बिना है। गुप्त **दान** की यीशु की शिक्षा यहूदी धर्म के लिए पराई नहीं थी। मिशनाह के अनुसार, मन्दिर में एक गुप्त स्थान होता था, जहां कोई विनम्र यहूदी अपनी ओर ध्यान खींचे बिना एकांत में दान दे सकता था। उसके दान से परमेश्वर का भय मानने वाले निर्धन परिवार की सहायता होती थी।[11] टालमुड की शिक्षा है, ''जो आदमी दान गुप्त में देता है वह हमारे गुरु मूसा से भी बड़ा है।''[12] इसमें यह भी कहा गया है, ''देने वाले को यह जानने की आवश्यकता नहीं है कि वह किसे दे रहा है, और पाने वाले को यह नहीं जानना चाहिए कि उसे किससे मिलता है।''[13]

परन्तु यीशु के कहने का अर्थ यह नहीं था कि हर दान गुप्त में ही दिया जाए। उसने पहले ही कहा था, ''उसी प्रकार तुम्हारा उजियाला मनुष्यों के सामने चमके कि वे तुम्हारे भले कामों को देखकर तुम्हारे पिता की, जो स्वर्ग में है, बड़ाई करें'' (5:16)। उसकी शिक्षा थी कि भले काम लोगों से तारीफ़ पाने के लिए नहीं किए जाने चाहिए। वे तारीफ़ पाने की इच्छा के बिना किए जाएं; तभी, यदि दूसरे लोग उन्हें देखते हैं तो वे परमेश्वर की महिमा करेंगे। यीशु लोगों के बीच में भला करने को गलत नहीं कह रहा था, पर वह प्रसिद्धि पाने के लिए भला करने की मंशा को गलत कह रहा था।

दान लोगों की वाहवाही लेने के लिए नहीं, बल्कि परमेश्वर से प्रतिफल पाने के लिए किया जाना चाहिए: ''**तेरा पिता जो गुप्त में देखता है, तुझे प्रतिफल देगा**।'' सर्वव्यापक होने के कारण परमेश्वर अपने लोगों द्वारा किए गए परोपकार के हर काम को ''देखता'' है और उसका सही-सही ''प्रतिफल'' देगा।

प्रार्थना करना (6:5-15)

कपटियों की तरह नहीं (6:5-8)

[5]''जब तू प्रार्थना करे, तो कपटियों के समान न हो, क्योंकि लोगों को दिखाने के लिए आराधनालयों में और सड़कों के मोड़ों पर खड़े होकर प्रार्थना करना उनको अच्छा लगता है। मैं तुम से सच कहता हूं कि वे अपना प्रतिफल पा चुके। [6]परन्तु जब तू प्रार्थना करे, तो अपनी कोठरी में जा, और द्वार बन्द करके अपने पिता से जो गुप्त में है, प्रार्थना कर। तब तेरा पिता जो गुप्त में देखता है, तुझे प्रतिफल देगा।

[7]''प्रार्थना करते समय अन्यजातियों के समान बक-बक न करो क्योंकि वे समझते हैं कि उनके बहुत बोलने से उन की सुनी जाएगी। [8]इसलिए तुम उनके समान न बनो, क्योंकि तुम्हारा पिता तुम्हारे मांगने से पहले ही जानता है कि तुम्हारी क्या-क्या आवश्यकताएं है।''

इसके बाद यीशु ने प्रार्थना की, बात की जिसमें उसने इसे करने का सही और गलत तरीका बताया। प्रार्थना करना सही है, पर इसे ''कपटियों'' की तरह करना गलत है। हमें यहां आम आराधना के लिए साधारण डांट को नहीं देखना चाहिए। यीशु अपनी प्रार्थनाओं की ओर दूसरों का ध्यान खींचने की परीक्षा में पड़ने के विरुद्ध ही चेतावनी दे रहा था।[14]

आयत 5. यीशु ने ''**जब तू प्रार्थना करे**'' कहते हुए आरम्भ किया। उसने यहूदियों से बात

की जो हर रोज़ ठहराए हुए समयों पर प्रार्थना करने के आदी थे। प्रार्थनाओं के साथ-साथ सुबह और शाम के बलिदान भी होते थे, जो पहले पहर (9:00 बजे प्रात:) और तीसरे पहर (अपराह्न 3:00 बजे) चढ़ाए जाते थे (एज्रा 9:5; दानिय्येल 9:21; लूका 1:10; प्रेरितों 3:1)।[15] दूसरे पहर अर्थात दोपहर को भी प्रार्थनाएं की जाती थीं (प्रेरितों 10:9)। इसलिए दिन में तीन बार प्रार्थना करना आम था (भजन संहिता 55:17; दानिय्येल 6:10)। कुछ आरम्भिक मसीही लोगों ने भी इसी व्यवहार को बनाए रखा।[16]

यीशु ने अपने चेलों को बताया कि वे **कपटियों के समान न** हों। मत्ती 23 अध्याय में उसने ''कपटियों'' की परिभाषा दी: ''शास्त्री और फरीसी मूसा की गद्दी पर बैठे हैं; इसलिए वे तुम से जो कुछ कहें वह करना और मानना, परन्तु उनके जैसे काम मत करना; क्योंकि वे कहते तो हैं पर करते नहीं'' (23:2, 3)। NIV में है ''वे जो प्रचार करते हैं वैसा स्वयं नहीं करते।'' फिर यीशु ने कहा कि यहूदी अगुवे जो लोगों के ऊपर भारी बोझ डालते हैं, उसे वे स्वयं ''... अपनी उंगली से भी सरकाना नहीं चाहते'' (23:4)। उसने उनकी कपटपूर्ण मंशाओं की बात की: ''वे अपने सब काम लोगों को दिखाने के लिए करते हैं'' (23:5)।

इन यहूदियों के कपट को उनके प्रार्थना करने से बढ़कर और कहीं नहीं देखा जा सकता। यीशु ने कहा कि कपटी **लोगों को दिखाने के लिए आराधनालयों में और सड़कों के मोड़ों पर खड़े होकर प्रार्थना करना अच्छा लगता है**। यहूदी लोग आम तौर पर अपने हाथ स्वर्ग की ओर ऊपर उठाकर, खड़े होकर ऊपर को देखते हुए प्रार्थना करते थे (1 राजाओं 8:22; भजन संहिता 28:2; 63:4; 134:2; लूका 18:11, 13)। रॉबर्ट एच. माउंस के अनुसार यदि प्रार्थना के ठहराए हुए समय पर कोई गली में होता तो ''रुककर, मन्दिर की ओर घूमकर प्रार्थना करना उचित था।''[17] कपटी लोग इस प्रकार से योजना बनाते होंगे कि प्रार्थना करते समय वे ऐसे स्थान में हों जहां सब को दिखाई दे सकें।

इन लोगों को भीड़ के बीच प्रार्थना करना अच्छा लगता था, क्योंकि इससे अध्यात्मिक सोच वाले होने के रूप में उनका नाम होता था। वे ''पवित्रजन'' कहलवाना चाहते थे। ध्यान खींचना चाहते थे और ऐसी स्थिति में जाने का प्रयास करते थे कि जिससे उनका नाम हो (लूका 18:9-14)। यीशु ने कहा कि ऐसे लोग **अपना प्रतिफल पा चुके**। मनुष्यों से प्रशंसा ही एकमात्र अदायगी थी, जो उन्हें मिलनी थी (6:2 पर टिप्पणियां देखें)।

आयत 6. इसके विपरीत, यीशु ने अपने चेलों को परमेश्वर के सामने **गुप्त में** नम्रता से **प्रार्थना** करने में अगुआई दी। **कोठरी** (*tameion*) घर के अन्दर गोदाम को कहा गया है। घर आम तौर पर कच्ची ईंटों से बने होते थे, जिस कारण चोर दीवार में से सेंध लगाकर (6:19) घर को लूट सकते थे। इसलिए **द्वार** वाली कोठरी बनवाना आवश्यक होता था जिसे ताला लगाया जा सके।[18] जो लोग दिल से अकेले में प्रार्थना करते हैं उन्हें अपने **पिता** की ओर से **प्रतिफल** मिलेगा, जो **गुप्त में** होने वाली हर चीज़ को देखता है।

यीशु आराधनालय की सेवाओं या मन्दिर की आराधना में आम लोगों के बीच प्रार्थना करने की मनाही नहीं कर रहा, परन्तु वह प्रार्थना का प्रदर्शन करने के लिए उन्हें डांट रहा था। यीशु अकेले में और लागों के बीच में भी प्रार्थना करता था और उसने अपने चलों को लोगों के बीच में भी प्रार्थना करने का ढंग सिखाया (6:9-13)।

आयत 7. यीशु ने संकेत दिया कि कपटी लोग केवल *दिखाने* के लिए ही प्रार्थना नहीं करना चाहते, बल्कि वे *सुनाने* के लिए भी प्रार्थना करना पसन्द करते हैं। वे **बहुत बोलने** के साथ **बकबक** करते थे। यीशु लम्बी प्रार्थनाओं को गलत नहीं कह रहा था। कम से कम एक बार उसने स्वयं रात भर प्रार्थना की (लूका 6:12)। वह प्रार्थनाओं की लम्बाई के लिए इतना चिन्तित नहीं था, जितना प्रार्थना करने वाले के व्यवहार से। प्रार्थना अपनी भाषणकला या शिक्षा को दिखाने के लिए नहीं होनी चाहिए।

यीशु अपने चेलों को प्रार्थनाएं दोहराने से मना नहीं कर रहा था। गतसमनी बाग में, अपने पकड़वाए जाने की रात उसने एक ही प्रार्थना तीन बार की थी (26:36-46)। दोहराव को गलत कहने के बजाय वह बार-बार दोहराए जाने वाले अर्थहीन वाक्यों का इस्तेमाल करने के लिए डांट रहा था, जो प्रार्थना करने वाले के मन से नहीं निकलते थे। ''बकबक'' के लिए यूनानी शब्द (*battalogeō*) का अर्थ ''बेकार, व्यर्थ बकवास'' है। यीशु ने चाहे अपने शब्दों को दोहराया पर अपने प्रार्थना करने में वह व्यक्तिगत और गम्भीर था। उसने अपने चेलों को यह सोचने के विरुद्ध चेतावनी दी कि उन्हें दूसरों को सुनाने के लिए अपने शब्दों से परमेश्वर को प्रभावित करना स्वीकार्य है। पहली सदी में कुछ रब्बी यह सिखाते थे कि प्रार्थना जितनी लम्बी होगी उतना ही परमेश्वर उसे सुनकर उसका उत्तर देगा।[19]

यीशु ने कहा कि **अन्यजातियों** का यही मानना है कि **बहुत बोलने से** उनकी सुनी जाएगी। मूर्तियों की पूजा करने वाले धर्मों में आम तौर पर सही संस्कार पर तो ज़ोर दिया जाता था पर मन के व्यवहार को अनदेखा किया जाता था। उनकी सुस्पष्टता का एक उदाहरण कीनर में मिलता है: ''रोमी न्यायाधीश प्रार्थनाओं को बिल्कुल वैसे ही पढ़ते थे, जैसे परम्परा के अनुसार उन्हें दी जाती थी; 'यदि एक अक्षर या संस्कार की एक मुद्रा गलत हो जाए तो प्रार्थना भी अमान्य हो सकती है।' ''[20] प्रार्थना को आम तौर पर देवताओं को कौशल दिखाने के माध्यम के रूप में देखा जाता था। माउंस ने कहा है कि अन्यजातियों ने ''इस उम्मीद से कि अन्तहीन दोहराव से वे असली देवता के नाम को किसी प्रकार उकसा सकेंगे और मुंह मांगा वर पाएंगे, दैवीय नामों की लम्बी सूचियां बना ली थी।''[21] मूर्तियों की पूजा करने वालों के संस्कारों में दोहराव की बात पुराने और नये दोनों नियमों में मिल सकती है: ''बाल के पुजारी सुबह से लेकर दोपहर तक पुकारते रहे, 'हे बाल, हमारी सुन, हे बाल, हमारी सुन' (1 राजाओं 18:26) और इफिसुस के रंगमच में भीड़ दो घण्टे तक चिल्लाती रही 'इफिसियों की अरतिमुस महान है' (प्रेरितों 19:34)।''[22]

आयत 8. यीशु नहीं चाहता था कि उसके चेले **उनके समान** यानी अन्यजातियों (और कपटियों) जैसे बनें। आखिर परमेश्वर **पिता** अपने बच्चों के **मांगने** से पहले ही **जानता** है कि उनकी क्या **आवश्यकता** है। प्रार्थना करने का उद्देश्य परमेश्वर को जानकारी देना या कौशल दिखाना नहीं है।[23] उसके बच्चों के लिए उसके पास भक्ति भय और धन्यवाद के साथ आना आवश्यक है। प्रार्थना में व्यक्ति हर अच्छे दान के देने वाले के रूप में परमेश्वर पर अपना भरोसा व्यक्त करता है (7:7-11; देखें याकूब 1:17)।

आदर्श प्रार्थना (6:9-13)

9''अतः तुम इस रीति से प्रार्थना किया करो;

'हे हमारे पिता, तू जो स्वर्ग में है,
तेरा नाम पवित्र माना जाए।
10तेरा राज्य आए।
तेरी इच्छा जैसी स्वर्ग में पूरी होती है,
वैसे ही पृथ्वी पर भी हो।
11हमारी दिन भर की रोटी आज हमें दे।
12और जिस प्रकार हम ने अपने अपराधियों को क्षमा किया है, वैसे ही तू हमारे अपराधों को भी क्षमा कर।
13और हमें परीक्षा में न ला, परन्तु बुराई से बचा; [क्योंकि राज्य और पराक्रम और महिमा सदा तेरे ही हैं। आमीन।]' ''

यहूदी रब्बियों के लिए अपने छात्रों को प्रार्थना करने का ढंग सिखाना आम बात थी। यीशु के चेलों ने उनसे विनती की: ''हे प्रभु, जैसा यूहन्ना ने अपने चेलों को प्रार्थना करना सिखलाया वैसे ही हमें भी तू सिखा दे'' (लूका 11:1)। यीशु के उपदेश के इस भाग में उसने अपने चलों को परमेश्वर से प्रार्थना करने की बुनियादी बातें सिखाईं।

उसके द्वारा उन सिखाई गई प्रार्थना (देखें लूका 11:2-4) को आम तौर पर ''प्रभु की प्रार्थना'' कहा जाता है। इसे ''चेलों की प्रार्थना'' कहना और कितना उपयुक्त होगा! यह प्रार्थना उनके लाभ के लिए दी गई थी, न कि यह प्रभु की व्यक्तिगत प्रार्थना थी (देखें 26:36-46; यूहन्ना 17:1-26)। इसे ''आदर्श प्रार्थना'' के रूप में कहा जाना उपयुक्त है, क्योंकि यीशु ने इसमें प्रार्थना करने के ढंग की बुनियादी रूपरेखा दी। नमूने की यह प्रार्थना संक्षिप्त और सरल तो है पर फिर भी गम्भीर है।

आयत 9. यीशु ने प्रार्थना का आरम्भ परमेश्वर से उसे **हे हमारे पिता, तू जो स्वर्ग में है,** के रूप में किया। उसने यह नहीं कहा, जैसा कि वह कह सकता था, ''हे मेरे पिता।'' उसने कहा, ''हे हमारे पिता।'' यीशु एक निराले ढंग से परमेश्वर का पुत्र था (यूहन्ना 3:16), परन्तु उसके चेले आत्मिक रूप से परमेश्वर की सन्तान थे (यूहन्ना 1:11-13)। यह महत्वपूर्ण बात है कि उसने अपने चेलों को परमेश्वर के साथ उसी निकटता से बात करने को कहा, जिससे वह करता था। पौलुस ने रोमी भाइयों को बताया कि परमेश्वर ने उनके मनों में अपने पुत्र के आत्मा को भेजा था और वे ''हे अब्बा, हे पिता पुकार'' सकते हैं (रोमियों 8:15)। ''अब्बा'' अपने पिता से बात करने के लिए किसी बच्चे द्वारा इस्तेमाल किया जाने वाला अरामी भाषा का शब्द है। इसे ''डैडी'' से कम जाना जाता है पर यह ''पिता'' से अधिक निकट है।

पिता के रूप में परमेश्वर की अवधारणा पुराने नियम में पाई जाती है, चाहे यह प्रसिद्ध विषय नहीं है (निर्गमन 4:22; व्यवस्थाविवरण 8:5; 14:1; 32:6; भजन संहिता 2:7; 103:13; यशायाह 63:16; 64:8; यिर्मयाह 3:4, 19; होशे 11:1-4; मलाकी 2:10)। दिलचस्प बात है

कि दोनों नियमों के अन्तराल के बीच के यहूदी इतिहास में प्रार्थना में पिता के रूप में परमेश्वर को सम्बोधित करने के कुछ उदाहरण मिलते हैं।[24] परन्तु यीशु ने अपनी सेवकाई के दौरान पिता के रूप में परमेश्वर के विचार को प्रसिद्ध कर दिया।

यीशु ने कहा, कि परमेश्वर का **नाम पवित्र माना** जाना चाहिए। भजनकार ने लिखा है, ''उसका नाम पवित्र और भययोग्य है'' (भजन संहिता 111:9)। KJV के अनुवाद में इसे ''उसका नाम पवित्र और रैवरेंड है'' कहा गया है। ''रैवरेंड'' परमेश्वर का नाम नहीं है, न ही यह परमेश्वर का पद है; यह उसके नाम का विशेषक है। उसके नाम का भय, आदर और सम्मान होना आवश्यक है (देखें निर्गमन 20:7)।

''पवित्र माना'' *hagiazō* का एक पुरातन अनुवाद है, जिसका अर्थ है ''पवित्र बनाओ।'' सचमुच में परमेश्वर के नाम को पवित्र मानने के लिए अंग्रेजी शब्द ''hallowed'' में उसका आदर करना, उसे महिमा देना और उसकी आज्ञा मानना शामिल है (5:16; 7:21; 1 कुरिन्थियों 10:31)। ''saint'' (संत) ''sanctify'' (पवित्र) और ''sanctification'' (पवित्रीकरण) ''Hallowed'' से जुड़े शब्द हैं। परमेश्वर पवित्र है और उसकी सन्तान भी पवित्र ही होनी चाहिए (1 पतरस 1:15, 16)।

आयत 10. परमेश्वर को सम्बोधन करने और उसकी प्रशंसा करने के बाद यीशु यह कहते हुए उसके राज्य की ओर मुड़ा, ''**तेरा राज्य आए।**'' यीशु द्वारा अपने चेलों को यह प्रार्थना सिखाने के समय, परमेश्वर का राज्य अभी भविष्य में था (3:2; 4:17; 10:7; मरकुस 9:1; प्रेरितों 1:6-8)। यह प्रार्थना उसकी राह देखते हुए जो पिन्तेकुस्त के दिन होने वाला था, जैसा कि प्रेरितों 2 अध्याय में बताया गया है, प्रतीक्षा करने की प्रार्थना थी। उस दिन पतरस ने पहली बार सुसमाचार का प्रचार भरपूरी से किया। उसने कहा कि परमेश्वर ने यीशु को दाऊद की गद्दी पर बिठाने के लिए जिलाया और यह कि इस समय वह स्वर्ग में परमेश्वर के राज्य पर शासन कर रहा है (प्रेरितों 2:24-36)। यीशु को ''प्रभु भी और मसीह भी'' बनाया गया है (प्रेरितों 2:36), ''मसीह'' यानी मसीहा या ''परमेश्वर का अभिषिक्त।'' राज्य आ चुका है (कुलुस्सियों 1:13; इब्रानियों 12:28; प्रकाशितवाक्य 1:9)। मसीह अब इस पर शासन कर रहा है और वह तब तक राज करता रहेगा, जब तक वह राज्य को पिता को नहीं सौंप देता (1 कुरिन्थियों 15:24-26)।

राज्य से नज़दीकी सम्बन्ध में, यीशु ने सिखाया, ''**तेरी इच्छा जैसी स्वर्ग में पूरी होती है वैसी ही पृथ्वी पर पूरी हो।**'' स्वर्ग में स्वर्गदूतों की सेना द्वारा परमेश्वर की इच्छा को ज्यों का त्यों पूरा किया जाता है। यीशु के चेलों को पृथ्वी के लोगों के मनों में वही अधीनता डालने के लिए प्रार्थना करने को कहा गया था। इस प्रकार की प्रार्थना के लिए चेलों का परमेश्वर की इच्छा के प्रति पहले अपने स्वयं के जीवनों में पूरी तरह समर्पण आवश्यक है। इस विनम्र व्यवहार के लिए बड़े बलिदान की आवश्यकता हो सकती है। यीशु द्वारा गतसमनी में ऐसे ही शब्द कहकर अन्तिम कीमत चुका दी गई: ''तौभी मेरी नहीं परन्तु तेरी ही इच्छा पूरी हो'' (लूका 22:42)।

आयत 11. यीशु ने जल्दी से आत्मिक मामलों से बात शारीरिक आवश्यकताओं की ओर मोड़ दी। उसने कहा, ''**हमारी दिन भर की रोटी आज हमें दे।**'' अनुवादित शब्द ''दिन भर'' का यूनानी शब्द (*epiousios*) पवित्र शास्त्र में और कहीं नहीं मिलता (लूका 11:3 में समानांतर वृत्तांत के अपवाद के साथ)। इस शब्द का अर्थ ''पर्याप्त,'' ''प्रतिदिन,'' या ''कल के

लिए'' हो सकता है। सही-सही अनुवाद चाहे जो भी हो, परमेश्वर के लिए प्रार्थना व्यक्ति की बुनियादी आवश्यकताओं को देने के लिए है। ''आज'' की जगह लूका 11:3 में ''दिन भर'' है।

अधिकतर अविकसित देशों में आज भी लोगों को उसी दिन के भोजन के लिए वेतन पाने के लिए दिन भर काम करना पड़ता है। बहुत बार समृद्धि से व्यक्ति में धन्यवाद नहीं रहता और प्रतिदिन परमेश्वर पर निर्भरता की कमी हो जाती है (व्यवस्थाविवरण 6:10-12; 8:11-18)। जब परमेश्वर ने स्वर्ग से इस्राएलियों के लिए मन्ना के साथ उपाय किया था, तो वह उन्हें सब्त के दिन की तैयारी को छोड़ एक दिन के लिए उतना ही देता था जितना आवश्यक था (निर्गमन 16:12-31)। यदि एक से अधिक दिन का राशन इकट्ठा कर लिया जाता तो मन्ना खराब हो जाता और अगली सुबह उसमें कीड़े भर जाते। याकूब ने हमें सिखाया कि कल की चिन्ता करना मूर्खता है, क्योंकि हो सकता है कि कल कभी न आए (याकूब 4:13-15; देखें मत्ती 6:34)।

आयत 12. यीशु के अनुसार, प्रार्थना में ध्यान देने वाली एक और बात क्षमा है। **अपराधों** के लिए शब्द (*opheilēma*) ''पाप'' के लिए पांच यूनानी शब्दों में से एक है (देखें लूका 11:4) और नये नियम में इसका इस्तेमाल केवल कुछ बार हुआ है। परन्तु इसके क्रियारूप का इस्तेमाल तीस से अधिक बार हुआ है। अरामी भाषा में, जो यीशु के समय के फलस्तीन की बोल चाल की भाषा थी, पाप को ''कर्ज़'' (*hobá*) माना जाता था।[25] परमेश्वर के अनुग्रह के सिंहासन के पास आने में इस शब्द का इस्तेमाल करना उपयुक्त है, क्योंकि हम सब **कर्ज़दार** हैं। क्षमा न करने वाले सेवक का यीशु का दृष्टांत (18:23-35) हमें इस सच्चाई को याद दिलाने के लिए दिया गया था। इस दृष्टांत का एक और सबक यह है कि जो लोग क्षमा नहीं कर पाते उन्हें परमेश्वर की ओर से क्षमा नहीं मिलेगी। यीशु ने प्रार्थना के अपने उदाहरण में यह स्पष्ट कर दिया और फिर 6:14, 15 में इस को और विस्तार दिया। पिता की ओर से हमें क्षमा मिलना हमारे अपने विरुद्ध पाप करने वालों को **क्षमा** करने की हमारी इच्छा पर निर्भर है, चाहे वे इसके हकदार हों या न। हमें वैसे ही क्षमा करना आवश्यक है, जैसे यीशु ने दूसरों को क्षमा किया, यहां तक कि उन्हें भी जिन्होंने उसे क्रूस पर चढ़ाया था (लूका 23:34)।

आयत 13. यीशु ने अपनी विनतियों को यह कहते हुए समाप्त किया, **''और हमें परीक्षा में न ला, परन्तु बुराई से बचा।''** ''परीक्षा'' के लिए यूनानी शब्द (*peirasmos*) का अर्थ परमेश्वर की ओर से ''परख'' या शैतान की ओर से ''प्रलोभन'' हो सकता है (4:1 पर टिप्पणियां देखें)। परमेश्वर हमें प्रलोभन में पड़ने की अनुमति देता है, पर ''वह किसी की परीक्षा आप नहीं करता है'' (याकूब 1:13)। जब परमेश्वर हमें प्रलोभन में पड़ने देता है तो वह उस पर सीमा लगा देता है, जो शैतान हमारे साथ कर सकता है (अय्यूब 1; 2) और ''निकास का रास्ता'' देता है (1 कुरिन्थियों 10:13)।

''हमें परीक्षा में ना ला'' के सही-सही अर्थ पर आम तौर पर बहस की जाती है। हम पूछते हैं, ''क्या परमेश्वर किसी को भी परीक्षा में डालता है?'' परन्तु यह ध्यान दिया जाना चाहिए कि यीशु को ''आत्मा जंगल में ले गया ताकि इबलीस से उसकी परीक्षा हो'' (4:1)। जो कुछ आत्मिक क्षेत्र में होता है उसमें अधिकतर बातें चाहे हमारे लिए रहस्य रहती हैं (इफिसियों 6:12), परन्तु हम इतना पक्का कह सकते हैं कि ''प्रभु भक्तों को परीक्षा में से निकाल लेना जानता है'' (2 पतरस 2:9)। इसलिए प्रभु के भक्तों को प्रार्थना करनी चाहिए कि वे ''परीक्षा में

न पड़ें'' (26:41) और परमेश्वर उन्हें ''बुराई'' या ''उस दुष्ट'' से छुड़ा ले (NIV)।

बाद की यूनानी हस्तलिपियों में यह स्तुतिगान शामिल किया गया, जिसे हिन्दी और NASB में कोष्ठकों में रखा गया है: ''**[क्योंकि राज्य और पराक्रमण और महिमा सदा तेरे ही हैं। आमीन।]**'' दूसरी सदी के एक मसीही लेख द *डिडेक्क* में संक्षिप्त समापन है: ''क्योंकि सामर्थ और महिमा सदा तेरे हैं।''[26] स्तुतिगान के विषय (''राज्य,'' ''सामर्थ,'' और ''महिमा'') प्रार्थना के आरम्भ की बातों को दर्शाते हैं (6:9, 10)।

सशर्त क्षमा (6:14, 15)

[14]''इसलिए यदि तुम मनुष्यों के अपराध क्षमा करोगे, तो तुम्हारा स्वर्गीय पिता भी तुम्हें क्षमा करेगा। [15]और यदि तुम मनुष्यों के अपराध क्षमा न करोगे, तो तुम्हारा पिता भी तुम्हारे अपराध क्षमा न करेगा।''

आयतें 14, 15. क्षमा के लिए यूनानी शब्द (*aphiēmi*) वही शब्द है, जिसका अर्थ ''फैंकना,'' ''रद्द करना'' या ''माफ़ करना'' है। जब हम पाप करते हैं और परमेश्वर से क्षमा मांगते हैं, वह हम से हमारे पाप को निकालकर इसे फैंक देता है। बेशक वह पाप को भूलता नहीं है पर वह उस पाप को फिर हमारे विरुद्ध नहीं रहने देता और हमारे साथ ऐसे व्यवहार करता है जैसे कभी कुछ हुआ ही न हो।[27]

अपराध (*paraptōma*) के बहुवचन रूप से अनुवाद किया गया है जिसका अर्थ ''अतिक्रमण'' भी हो सकता है। सुसमाचार के वृत्तांतों में इस शब्द का इस्तेमाल केवल यहीं पर और मरकुस 11:25, 26 में हुआ है। इसमें ''थिड़कने,'' ''ठोकर लगने,'' या ''गिरने'' का विचार मिलता है। आयत 12 में ''अपराध'' (*opheilēma*) शब्द की तरह यह ''पाप'' के लिए एक और शब्द है।

परमेश्वर की ओर से हमारी क्षमा हमारे विरुद्ध पाप करने वाले अपने **अपराधियों को क्षमा** करने की हमारी इच्छा पर निर्भर है। यदि हम क्षमा नहीं देते हैं तो परमेश्वर हमें **क्षमा नहीं करेगा**।

उपवास करना (6:16-18)

[16]''जब तुम उपवास करो, तो कपटियों के समान तुम्हारे मुंह पर उदासी न छाई रहे, क्योंकि वह अपना मुंह बनाए रहते हैं, क्योंकि लोग उन्हें उपवासी जानें। मैं तुम से सच कहता हूं कि वे अपना प्रतिफल पा चुके। [17]परन्तु जब तू उपवास करे तो अपने सिर पर तेल मल और मुंह धो, [18]ताकि लोग नहीं परन्तु तेरा पिता जो गुप्त में है, तुझे उपवासी जाने। इस दशा में तेरा पिता जो गुप्त में देखता है, तुझे प्रतिफल देगा।''

दान (6:2-4) और प्रार्थना करने (6:5-15) पर चर्चा करने के बाद यीशु ने तीन बड़े आत्मिक अनुशासनों में से तीसरे यानी उपवास करने को लिया जिसमें चेलों से शामिल होना था (6:16-18)। एक बार फिर उसने मनुष्यों को दिखाने के लिए धार्मिकता के उनके काम करने के लिए चेतावनी दी।

आयत 16. यीशु ने उपवास करने की चर्चा का आरम्भ **जब तुम उपवास करो** वाक्यांश के साथ किया। यहूदियों के दान देने (6:2) और प्रार्थनाएं करने (6:5) की तरह ही उपवास करना वह गतिविधि थी, जिससे यीशु ने माना कि उसके चेले पहले से कर रहे हैं।

''उपवास'' के लिए पुराने नियम का इब्रानी भाषा का शब्द (*tsum*) है। प्रायश्चित के दिन के सम्बन्ध में उपवास करने के विचार को मन को दीन (''दुखी''; KJV) करना है (लैव्यव्यवस्था 16:29-31)। व्यवस्था में वास्तव में केवल इसी उपवास की आज्ञा दी गई, पर सदियों से उपवास के और दिनों ने भी जगह बना ली। यहूदी परम्परा में कहा जाता था, ''प्रायश्चित के दिन (1) खाने, (2) पीने, (3) नहाने, (4) किसी भी प्रकार का तेल लगाने, (5) जूता पहनने, या (6) शारीरिक सम्बन्ध बनाने की मनाही थी।''[28]

पुराने नियम के कुछ उपवास कभी-कभी होते थे और वे असाधारण थे, जबकि दूसरे उपवास लगातार किए जाते थे। उपवास बीमारी, शोक, आपदा, पाप के लिए शोक और अन्य नाज़ुक परिस्थितियों के लिए किए जाते थे (देखें भजन संहिता 35:13)। दाऊद ने उपवास रखा था, जब उसका बेटा बीमार था और मर रहा था (2 शमूएल 12:16-23)। याबेश के लोगों के साथ उसने शाऊल और उसके पुत्रों के लिए उपवास रखा और सात दिन तक शोक किया था (1 शमूएल 31:12, 13; 2 शमूएल 1:11-16)। मूसा और दानिय्येल दोनों ने परमेश्वर की ओर से प्रकाशन पाने से पहले उपवास रखा था (निर्गमन 34:28; दानिय्येल 9:3)। एलिय्याह ने इज़ेबेल के क्रोध से भागने के समय उपवास किया (1 राजाओं 19:8)। यहां तक कि दुष्ट अहाब ने भी यह बताए जाने पर कि परमेश्वर उसके पापों के लिए उसे शाप देने वाला है, उपवास किया। उसके प्रायश्चित का ध्यान करते हुए परमेश्वर ने शाप वापस ले लिया था (1 राजाओं 21:27)। पुराने नियम में सामूहिक और राष्ट्रीय उपवासों के उदाहरण मिलते हैं (यहोशू 7:6; न्यायियों 20:24-28; 1 शमूएल 7:6; 2 इतिहास 20:3; एज्रा 8:21-23; नहेम्याह 9:1; योना 3:5)। यहूदियों के बाबुल में बन्दी बनाकर ले जाए जाने के समय, उन्होंने अपने पापों के लिए पश्चात्ताप को दिखाने के लिए उपवास के समय ठहरा दिए थे। जकर्याह ने लिखा कि उपवास चौथे, सातवें और दसवें महीने के पांचवें दिन किए जाते थे (जकर्याह 7:1-7; 8:19)।

अनुवादित शब्द ''उपवास'' का यूनानी शब्द (*nēsteuō*) है और इससे जुड़े संज्ञा शब्द नये नियम में लगभग तीस बार मिलते हैं। ये शब्द भोजन या पेय से परहेज का संकेत देते हैं। उपवास करना आम तौर पर आत्मिक उद्देश्य से जुड़ा होता है। सही ढंग से किए जाने पर यह व्यक्ति को परमेश्वर के निकट लाता है। इसी प्रकार आमतौर इसे प्रार्थना के साथ जोड़ा जाता है (लूका 2:37; 5:33; प्रेरितों 13:3; 14:23)। उपवास करना प्रदर्शन के लिए नहीं है; यह दिल से पश्चात्ताप और गम्भीर व्यवहार और मन की स्थिति को दिखाने का प्रमाण है।

यीशु, जो मूसा की व्यवस्था के अधीन जीया और मरा, उसने शैतान के साथ अपनी मुलाकात से पहले चालीस दिन और चालीस रात उपवास किया (4:2)। उसने चेलों को उपवास करने की आज्ञा नहीं दी। परन्तु उसने संकेत दिया कि उसके चेले उपवास करेंगे।

हमारे पास यह दिखाने का कोई उदाहरण नहीं है कि नये नियम में आरम्भिक कलीसिया लगातार उपवास करती हो। मसीही लोग बड़े फैसले लेने से पहले उपवास करते थे, जैसे पौलुस और बरनबास को पहली मिशनरी यात्रा पर भेजने के समय (प्रेरितों 13:2) और मण्डली में

सेवा करने के लिए ऐल्डरों का चयन करने से पहले (प्रेरितों 14:23) उपवास रखे जाने का वर्णन मिलता है।

जब मसीह आया तो फरीसी लोग सप्ताह में दो बार उपवास रखते थे (लूका 18:12), आमतौर पर सोमवार और गुरुवार के दिन होता था, क्योंकि इन दिनों पर बाज़ार लगता था।[29] इससे उन्हें लोगों को अपने भक्त होने को दिखाने का अवसर मिल जाता है। ये लोग वही हैं, जिनकी बात यीशु ने की कि उनके मुंह पर **उदासी** छाई रहती थी और **वे अपना मुंह बनाए रहते** थे ताकि लोगों को लगे कि उन्होंने **उपवास रखा** हुआ है। वे बिना बाल बनाए, सिल्वटों वाले कपड़े पहने और बीमार से लगने के लिए सफ़ेद पाउडर मुंह पर लगाकर घूमते होंगे। एक बार फिर यीशु ने कहा कि ऐसे **कपटी** जो सार्वजनिक रूप में परमेश्वर के सामने दीन होने का ढोंग कर रहे थे, **अपना प्रतिफल पा चुके**।

आयतें 17, 18. इसके विपरीत यीशु ने अपने चेलों को बताया कि वे अपने उपवास लोगों को दिखाने के लिए न रखें। यहूदी परम्परा के विरुद्ध जाते हुए उसने कहा कि उसके चेले उपवास रखने के समय [अपने] **सिर** पर तेल **मलकर** पानी से [अपने] मुंह को **धोएं**।[30] यह स्पष्ट है कि यीशु किसी की धार्मिकता को अपने आप में रखने के प्रति इतना चिन्तित था कि उसने पारम्परिक बातों के विपरीत बातें की जिसे उसके समकालीन कठोर उपवास की आवश्यक बातें मानते थे।[31] यह मान लिया कि कई बार उपवास की बातों को पूरी तरह से गुप्त रखना कठिन होगा (6:4, 6 पर टिप्पणियां देखें), परन्तु चेले के लिए इसे गुप्त रखने की कोशिश करना आवश्यक था। कहने का मतलब यह है कि यीशु के चेलों को धार्मिकता के अपने कामों को सार्वजनिक नहीं करना था। यदि वे विनम्रतापूर्वक उपवास रखते तो परमेश्वर ने उन्हें प्रतिफल देना था।

❖❖❖❖❖ **सबक** ❖❖❖❖❖

दिल से दान देना (6:2-4)

मत्ती 6:1-18 में यीशु ने दान देने, प्रार्थना करने और उपवास करने सहित धर्म के कामों को करने पर चर्चा की। इन भागों के आरम्भ (6:2-4) में हमें दान पर तीन सबक मिलते हैं।

पहले, हमें परमेश्वर के लिए प्रेम के कारण देना चाहिए, न कि अपने आस-पास के लोगों को दिखाने के लिए। यीशु ने अपने चेलों को दूसरों को प्रभावित करने के लिए देने के विरुद्ध चेतावनी दी। हनन्याह और सफीरा की कहानी इस नियम को बखूबी समझाती है। इस दम्पत्ति ने कुछ सम्पत्ति बेची थी, और फिर हनन्याह ने मिले पैसों में से कुछ भाग प्रेरितों के चरणों में रख दिया। उसने कुछ धन अपने पास रख लिया जबकि बताया यह कि उसने उसमें से सारा दे दिया है। यह उसने अपनी पत्नी की पूरी जानकारी में किया था। उनके मिलकर छल करने का परिणाम उनकी मृत्यु हुई; परमेश्वर ने उनके कपट का एक उदाहरण दे दिया (प्रेरितों 5:1-11)। यीशु ने कहा कि जो लोग दूसरों को दिखाने के लिए देते हैं ''वे अपना प्रतिफल पा चुके'' हैं यानी उन्हें केवल यही प्रतिफल मिलेगा कि लोग उनकी सराहना करेंगे। इसके विपरीत मसीही व्यक्ति का दान परमेश्वर के लिए प्रेम रखने वाले मन से निकलना चाहिए। यूहन्ना ने लिखा, ''हम इसलिए प्रेम करते हैं, कि पहिले उसने हमसे प्रेम किया'' (1 यूहन्ना 4:19)। जब हम परमेश्वर को

महिमा देते हैं तो अन्त में वह हमें उसका प्रतिफल देगा।

दूसरा, हमें सावधानी से देना चाहिए। देने के विषय में यीशु ने कहा कि ''जब तू दान करे, तो जो तेरा दहिना हाथ क्या करता है उसे तेरा बायां हाथ जानने न पाए।'' यह इस बात को कहने का लोकोक्ति का ढंग हो सकता है कि देना जहां तक हो गुप्त में होना चाहिए। जब हम दान दें तो हमें दूसरों के सामने अपनी उदारता का ढिंढ़ोरा नहीं पिटवाना चाहिए।

तीसरा, हमें सचमुच में दूसरों की सहायता के लिए देना चाहिए। यहां यीशु यहूदियों के निर्धनों को दान देने की प्रथा की बात कर रहा था। यीशु ने स्वयं बहुत सी आवश्यकताओं को पूरा करते हुए करुणा का नमूना दिया। इनमें से कुछ समस्याएं शारीरिक (भूख, बीमारी, रोग और मृत्यु), जबकि अन्य आत्मिक समस्याएं थीं (अज्ञानता, दुष्टात्माओं से ग्रस्त होना और आत्मिक मृत्यु)। हमारा देना दूसरों की तकलीफ़ को दूर करने के लक्ष्य के साथ ही होना चाहिए। याकूब ने लिखा, ''हमारे परमेश्वर और पिता के निकट शुद्ध और निर्बल भक्ति यह है कि अनाथों और विधवाओं के क्लेश में उनकी सुधि लें, और अपने आपको संसार से निष्कलंक रखें'' (याकूब 1:27)। उसने समझाया कि ''सुधी'' से उसका क्या अभिप्राय है। ''यदि कोई भाई या बहिन नङ्गे उघाड़े हों, और उन्हें प्रति दिन भोजन की घटी हो। और तुममें से कोई उन से कहे, कुशल से जाओ, तुम गरम रहो और तृप्त रहो; पर जो वस्तुएं देह के लिए आवश्यक हैं वह उन्हें न दे, तो क्या लाभ?'' (याकूब 2:15, 16)। जरूरतमंद लोगों के लिए सहानुभूति रखना किसी काम नहीं आता; हमें उनकी निराशा को दूर करने के लिए कुछ करना आवश्यक है। यीशु की शिक्षा से संकेत मिलता है कि मुसीबत में पड़े लोगों के लिए सचमुच में करुणा करना ज़रूरतमंद लोगों के लिए सहायता करने का कारण बनेगा।

हमारा दान परमेश्वर की नज़र में बड़ा होने के लिए मनुष्यों की नज़र में बड़ा होना आवश्यक नहीं है। एक विधवा के ''तांबे के दो छोटे सिक्कों'' के योगदान ने यीशु का ध्यान खींचा (मरकुस 12:41-44)। सचमुच के परोपकार में कपड़े की कोई चीज़, गर्म भोजन, या पानी का ठण्डा गिलास जैसी छोटी-छोटी बातें हो सकती हैं (10:42; 25:34-40)।

प्रार्थना (6:5-8)

पिता को हमारे मांगने से पहले मालूम होता है कि हमें क्या आवश्यकता है, तो फिर हमें मांगना क्यों चाहिए? परमेश्वर को मालूम है कि हमें क्या आवश्यकता है, पर फिर भी वह चाहता है कि हम उससे बात करें (7:7; फिलिप्पियों 4:6)। कई बार वह हम से चाहता है कि हम बार-बार मांगें। यीशु ने इस सच्चाई को समझाने के लिए दो दृष्टांत बताए, एक तो आधी रात को आने वाले मित्र का (लूका 11:5-10) और दूसरा हठी विधवा का (लूका 18:1-8)। जिस प्रकार से यीशु ने गतसमनी में एक ही बात के लिए, तीन बार प्रार्थना की (26:36-46), वैसे ही पौलुस ने अपने ''शरीर में से कांटा'' निकाले जाने के लिए तीन बार प्रार्थना की (2 कुरिन्थियों 12:7-10)। परमेश्वर को हमारी प्रार्थनाओं के बड़े या छोटे होने की उतनी परवाह नहीं है जितनी इस बात की कि हमारे प्रार्थना करने को छोड़ने की प्रवृत्ति से। हम परमेश्वर को अपनी इच्छाओं से मेल खाने के लिए परेशान नहीं कर सकते, पर कई बार हमें समझाना चाह सकता है कि किसी विशेष प्रार्थना के लिए हमें उसके उत्तर की कितनी आवश्यकता है।

सही प्रार्थना करने के लिए निष्पकट मन और साफ़ इरादे होने आवश्यक हैं। इसमें विश्वास के साथ प्रार्थना करना भी शामिल है कि परमेश्वर अपने बच्चों की भलाई के लिए हर प्रार्थना को सुनता और उसका उत्तर देता है (1 यूहन्ना 5:14, 15)। हमें प्रार्थना हमेशा ''परमेश्वर की इच्छा के अनुसार'' करनी चाहिए। हम निष्कपटता से यह प्रार्थना तब तक नहीं कर सकते कि ''तेरी इच्छा पूरी हो'' जब तक हम उसकी इच्छा को पूरी न कर दें। परमेश्वर की इच्छा के अनुसार प्रार्थना करने के लिए, हमें यह जानने के लिए कि उसकी इच्छा क्या है उसके वचन का अध्ययन करना आवश्यक है। जब हम सच्चे मन से प्रार्थना करते हैं कि ''तेरी इच्छा पूरी हो,'' तो वह हमारी प्रार्थनाओं का उत्तर देता है। हो सकता है कि वह कहे, ''हां,'' ''नहीं,'' या ''थोड़ी देर रुको,'' परन्तु वह अपने लोगों की प्रार्थनाओं का उत्तर अवश्य देगा।

आदर्श प्रार्थना (6:9-13)

जब यीशु ने अपने चेलों को प्रार्थना करना सिखाया, तो उसने पांच बातें बताईं, जो आज हमारी प्रार्थनाओं का भाग होनी चाहिए।

पहला, हमें परमेश्वर को महिमा देनी चाहिए (6:9)। हमारा सृष्टिकर्त्ता, सम्भालने वाला और छुड़ाने वाला होने के कारण परमेश्वर महिमा के योग्य है। हमें प्रेम, पवित्रता, दया, और अनुग्रह के उसके गुणों के लिए उसकी महिमा करनी चाहिए (प्रकाशितवाक्य 4:8-11)।

दूसरा, हमें राज्य को प्राथमिकता देनी चाहिए (6:10)। यीशु ने अपना राज्य अर्थात कलीसिया पहले ही स्थापित कर दी थी (16:18, 19; प्रेरितों 2)। परन्तु हम राज्य के बढ़ने, अपने मिशनरियों के लिए और हर प्रचारक और सिखाने वाले के लिए जो ईमानदारी से परमेश्वर के वचन को फैलाने के लिए ईमानदारी से प्रयास कर रहा है, प्रार्थना करते हैं।

तीसरा, हमें भोजन के उपाय के लिए मांगना चाहिए (6:11)। परमेश्वर को पहले ही पता है कि हमें किन चीज़ों की आवश्यकता है (6:32) पर हमें जीवन की बुनियादी आवश्यकताओं जैसे भोजन, कपड़ा और मकान के लिए प्रार्थना में उसके पास आना चाहिए। हमें उन सब के लिए जो उसने हमारे लिए कालांतर में किया है, धन्यवाद देना चाहिए और भविष्य में हमें सम्भालने के लिए उससे कहना चाहिए।

चौथा, हमें पापों की क्षमा मांगनी चाहिए (6:12)। मसीही लोगों को चाहे पिछले पापों से बचा लिया गया है, पर फिर भी हम परमेश्वर की उम्मीद पर खरा नहीं उतरते। हमें लगातार मसीह के लहू से धोए जाने की आवश्यकता है और प्रार्थना में हमें क्षमा के लिए कहते रहना चाहिए (1 यूहन्ना 1:7-10)। यदि हम परमेश्वर से हमें क्षमा करने की उम्मीद करते हैं तो हमें भी दूसरों को क्षमा करने वाला मन दिखाना आवश्यक है।

पांचवां, हमें बुराई से बचाव के लिए विनती करनी चाहिए (6:13)। हमें उस आत्मिक युद्ध के प्रति जो हमारे आस-पास लड़ा जा रहा है, चौकस रहना (इफिसियों 6:10-20) और हमारे सामने आने वाली परीक्षाओं पर काबू पाने के लिए पवित्र आत्मा के द्वारा हमें परीक्षा से बचाव और सामर्थ के लिए परमेश्वर से मांगना आवश्यक है।

डेविड स्टिवर्ट

आदर्श प्रार्थना को दोहराना (6:9-13)

आदर्श प्रार्थना कभी भी बार-बार प्रार्थना करने के इरादे से नहीं दी गई। इसे प्रभु द्वारा अपने चेलों के लिए प्रार्थना की मूल बातों को सीखने के लिए उदाहरण में दिया गया है (लूका 11:1-4)। इस प्रार्थना को बार-बार कहना ''बकबक करने'' की यीशु की पहले कही गई बात का उल्लंघन करना है (6:7)। यहूदियों ने कई प्रार्थनाएं रटी हुई थीं, जो उन्हें इतनी ज़बानी याद थीं कि कई बार उन्हें इसका अर्थ पता ही नहीं होता था। प्रार्थना की पुस्तकों का इस्तेमाल करने वाले लोग लगता है कि कुछ ऐसा ही करते हैं। हो सकता है कि वे केवल शब्दों को पढ़कर या उन वाक्यांशों को खोलकर जिनका उनके लिए वास्तव में कोई अर्थ न हो बिना सोचे कह दें। पूरी ईमानदारी से हम वही काम कर सकते हैं जब हम उन बातों को दोहराते रहते हैं, जो सच्चे मन से प्रार्थना नहीं होती। नये नियम में कहीं भी चाहे वह सुसमाचार की पुस्तकें हों, प्रेरितों के काम या पत्रियों, हमें आरम्भिक मसीही लोगों के यीशु की आदर्श प्रार्थना के शब्दों को दोहराने की बात नहीं मिलती। निश्चय ही उन शब्दों को याद करना और उन्हें दोहराना उपयोगी होगा, जैसे पवित्र शास्त्र की कोई और आयत, या आज हमारे लिए उसके अर्थ को समझाना है। परन्तु यीशु ने कभी भी इस प्रार्थना को दोहराने के अर्थ में या रीति के रूप में देने का इरादा नहीं रखा।

''हे हमारे पिता'' (6:9)

जिन्होंने परमेश्वर के परिवार में ''नया जन्म'' पा लिया है, उसे केवल वही लोग आत्मिक पिता के रूप में जान सकते हैं (यूहन्ना 3:3; मत्ती 23:9)। एक अर्थ में, सब लोग परमेश्वर की सन्तान हैं, क्योंकि उसने हमें पीढ़ी के द्वारा जन्म दिया है; परन्तु केवल ''नया जन्म'' पाकर आने वाले ही उसकी आत्मिक सन्तान हैं। आज कुछ लोग केवल विश्वास के आधार पर परमेश्वर के साथ ''पुत्र होने'' का दावा करना चाहते हैं, पर यह काफ़ी नहीं है (गलातियों 3:26, 27)। कुछ लोग पानी को नये जन्म में से निकाल देना चाहते हैं, पर ''जल और आत्मा'' से जन्म लिए बिना परमेश्वर के आत्मिक बेटे या बेटी होना असम्भव है (यूहन्ना 3:5)। परमेश्वर का कोई सौतेला बच्चा नहीं है। परमेश्वर की सन्तान होने की एक आशीष उत्तर मिली प्रार्थना की प्रतिज्ञा है (1 पतरस 3:12; 1 यूहन्ना 5:14, 15)। यदि हम मसीही हैं तो परमेश्वर हमारा पिता है-''हे हमारे पिता तू जो स्वर्ग में है।'' स्वर्ग के सभी स्रोत हमें प्रार्थना करने पर मिल जाते हैं। पौलुस ने लिखा कि ''हमारे ... परमेश्वर ... ने हमें मसीह में स्वर्गीय स्थानों में सब प्रकार की आत्मिक आशीष दी है'' (इफिसियों 1:3)। परमेश्वर अपने बच्चों को आशीष देना चाहता है (7:7-11)।

''तेरा राज्य आए'' (6:10)

राज्य के आने की प्रार्थना का उत्तर पिन्तेकुस्त के दिन दे दिया गया था (प्रेरितों 2)। बेशक मसीही लोगों के लिए आज राज्य के आने की प्रार्थना करना उपयुक्त नहीं है। पर हमारे लिए परमेश्वर की इच्छा ''जैसे स्वर्ग में पूरी होती है वैसे पृथ्वी पर'' भी होने के लिए प्रार्थना करना अच्छा है। अब जबकि राज्य है तो परमेश्वर की इच्छा पृथ्वी पर उन लोगों द्वारा पूरी की जा रही है, जो उसका आदर करते हैं। परमेश्वर सर्वशक्तिमान है, पर उसने मनुष्य को अपनी इच्छा चुनने की छूट दी है। इसका अर्थ है कि हम चाहें तो उसकी इच्छा पूरी करना चुनें, चाहें तो नहीं।

इस संदर्भ के आधार पर, आज हमें क्या प्रार्थना करनी चाहिए? पहले तो हम में से हर किसी को अपने जीवनों में परमेश्वर की इच्छा पूरी करने के लिए प्रार्थना करनी चाहिए। फिर यह प्रार्थना करना सही है कि उसका शासन पृथ्वी पर भी वैसे ही हो, जैसे स्वर्ग में। हमारी प्राथनाएं यही होनी चाहिए कि हर जिम्मेदार व्यक्ति पिता की इच्छा से मेल खाती इच्छा रखे।

उपवास करने के कारण (6:16-18)

चाहे मसीही लोगों के लिए उपवास रखने की कोई आज्ञा नहीं है पर निश्चय ही यीशु की बात का अर्थ है कि उसके चेले उपवास रखेंगे। उपवास रखने की बात को नज़रअन्दाज़ करके हम कई लाभों से वंचित हो सकते हैं, वे लाभ शारीरिक भी हो सकते हैं और आत्मिक भी। उपवास रखने के कुछ अच्छे कारण इस प्रकार हैं:

1. अपने आपको परमेश्वर की नज़र में दीन बनाना (1 राजाओं 21:27-29; एज्रा 8:21; भजन संहिता 35:12, 13)।
2. किसी विशेष चिन्ता पर ध्यान करना जिसके लिए हमें प्रार्थना करने की आवश्यकता है।
3. अपने जीवनों में आत्मिक बातों को पहल देना। उपवास करना हमें इस संसार की बातों की ओर कम ध्यान देने और परमेश्वर और आत्मिक बातों की ओर अधिक ध्यान देने में सहायक हो सकता है।
4. परीक्षा में स्थिर रहन के लिए अपना आत्मसंयम और अपनी योग्यता को बढ़ाने के लिए। उपवास से आत्मसंयम, आत्मनियन्त्रण बढ़ सकता है जिससे आत्मिक परिपक्वता बढ़ सकती है और आत्मिक परिपक्वता से परमेश्वर के साथ निकटता बढ़ सकती है।

टिप्पणियां

[1]क्रेग एस. कीनर, *ए कमैंट्री ऑन द गॉस्पल ऑफ़ मैथ्यू,* (ग्रैंड रैपिड्स, मिशिगन: विलियम बी. ईर्डमैंस पब्लिशिंग कं., 1999), 207. टोबित 12:8 में ''दान देने,'' ''प्रार्थना करने,'' और ''उपवास करने'' के बारे में इकट्ठे बताया गया है पर इसमें एक अलग बात के रूप में ''धार्मिकता'' को भी शामिल गया किया है। [2]*जौंडरवन इलस्ट्रेटेड बाइबल बैक्ग्राउंड्स कमैंट्री,* अंक 1, *मैथ्यू, मार्क, लूक,* संपा. क्लिंटन ई. अरनोल्ड (ग्रैंड रैपिड्स, मिशिगन: जौंडरवन, 2002), 43 में माइकल जे. विलकिन्स, *''मैथ्यू।''* [3]टोबित 12:9 (NRSV)। [4]मिशनाह *शेकालिम* 2.1; 6.1, 5. [5]जैक पी. लुईस, *द गॉस्पल अकॉर्डिंग टू मैथ्यू,* पार्ट 1, द लिविंग वर्ड कमैंट्री (आस्टिन, टैक्सस: स्वीट पब्लिशिंग कं., 1976), 98-99. [6]वही, 99. [7]प्रवक्ता ग्रन्थ 1:29. [8]विलकिन्स, 44. [9]सेस्लस स्पिक, *थियोलॉजिकल लैक्सिकन ऑफ़ द न्यू टैस्टामैंट,* अनु. व संपा. जेम्स डी. अर्नेस्ट (पीबॉडी, मैसाचुएट्स: हैंड्रिक्सन पब्लिशर्स, 1994), 1:162-64. [10]रॉबर्ट एच. गुंड्री, *मैथ्यू: ए कमैंट्री ऑन हिज़ लिटरेरी एंड थियोलॉजिकल आर्ट* (ग्रैंड रैपिड्स, मिशिगन: विलियम बी. ईर्डमैंस पब्लिशिंग कं., 1982), 102.

[11]मिशनाह *शेकालिम* 5.6. [12]टालमुड *बाबा बथरा* 9बी. [13]वही, 10बी। [14]डेविड हिल, *द गॉस्पल ऑफ़ मैथ्यू,* द न्यू सेंचुरी बाइबल कमैंट्री (ग्रैंड रैपिड्स, मिशिगन: विलियम बी. ईर्डमैंस पब्लिशिंग कं., 1972), 133. [15]देखें जोसेफस *एन्टिक्विटीस* 14.4.3. [16]*डिडेके* 8.3. [17]रॉबर्ट एच. माउंस, *मैथ्यू,* न्यू इंटरनैशनल बिब्लिकल कमैंट्री (पीबॉडी, मैसाचुएट्स: हैंड्रिक्सन पब्लिशर्स, 1991), 54-55. [18]लियोन मौरिस, *द गॉस्पल अकॉर्डिंग टू मैथ्यू,* पिल्लर कमैंट्री (ग्रैंड रैपिड्स, मिशिगन: विलियम बी. ईर्डमैंस पब्लिशिंग कं., 1992), 141, एन. 22. [19]एक रब्बी

ने कहा, ''हर व्यक्ति जो प्रार्थना को बढ़ाता है, उसकी सुनी जाएगी'' (जॉन लाइटफुट, *ए कमैंट्री ऑन द न्यू टैस्टामैंट फ्रॉम द टालमुड एंड हेब्रेका: मैथ्यू-1 कोरिन्थियंस,* अंक 2, *मैथ्यू-मार्क* [ऑक्सफोर्ड: ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रैस, 1859; रिप्रिंट, ग्रैंड रैपिड्स, मिशिगन: बेकर, 1979], 145)। [20]कीनर, 213; जॉन ई. स्टैम्बौ एंड डेविड एल. बाल्च, *द न्यू टैस्टामैंट इन इट्स सोशल एन्वायर्नमेंट,* लाइब्रेरी ऑफ़ अर्ली क्रिश्चियनिटी, अंक 2 (फिलाडेल्फिया: वेस्टमिंस्टर प्रैस, 1986), 129 को उद्धृत करते हुए।

[21]माउंस, 55. [22]विलकिन्स, 44-45. [23]जॉन आर. डब्ल्यू. स्टॉट, *द मैसेज ऑफ़ द सरमन ऑन द माउंट (मैथ्यू 5-7): क्रिश्चियन काउंटर कल्चर,* द बाइबल स्पीक्स टुडे (डाउनर्स ग्रोव, इलिनोइस: इंटर-वर्सिटी प्रैस, 1978), 144. [24]विज़डम ऑफ़ सॉलोमन 14:3; प्रवक्ता ग्रन्थ 23:1, 4. [25]क्रेग ए. इवेन्स, संपा., *द बाइबल नॉलेज बैकग्राउंड कमैंट्री: मैथ्यू-लूक,* बाइबल नॉलेज सीरीज़, अंक 1 (कोलोराडो स्प्रिंग्स, कोलोराडो: विक्टर, 2003), 232. [26]*डिडेक* 8.2. [27]इस प्रतिज्ञा का कि ''मैं उनके पापों को फिर स्मरण न करूंगा'' (इब्रानियों 8:12; 10:17) का अर्थ केवल इतना है कि परमेश्वर हमें हमारी गलतियों के लिए दण्ड नहीं देगा। देखें एफ़. एफ़. ब्रूस, *द एपिस्टल टू द हिब्रूस* द न्यू इंटरनैशनल कमैंट्री ऑन द न्यू टैस्टामेंट (ग्रैंड रैपिड्स, मिशिगन: विलियम बी. ईर्डमैंस पब्लिशिंग कं., 1964), 175. [28]मिशनाह *योमा* 8.1. [29]मिशनाह *टानिथ* 1.4-7; 2.9. दूसरी शताब्दी की पुस्तक *डिडेक* में विश्वासियों को इस प्रकार बताया गया था: ''पर तुम्हारे उपवास कपटियों के उपवासों से मिलते न हों। वे सोमवार और गुरुवार को उपवास रखते हैं, इसलिए तुम बुधवार और शुक्रवार को उपवास रखना होगा'' (*डिडेक* 8.1)। [30]दाऊद के उपवास के समय के *बाद* में ही उसने ''नहाकर तेल लगाया, और वस्त्र बदले'' (2 शमूएल 12:20)।

[31]कीनर, 228. [32]परन्तु आदर्श प्रार्थना को दोहराने की बात दूसरी शताब्दी में भी मिलती है। शायद यहूदियों की प्रथाओं की तरह दिखाने के लिए *डिडेक* में विश्वासियों को आदर्श प्रार्थना दिन में तीन बार करने का निर्देश है। (*डिडेक* 8.2, 3.)